छत्तीसगढ़ का रामनामी संप्रदाय : जहाँ माटी का चोला भी है राम

अम्बरीश त्रिपाठी

'राम' संभवतः 'माँ' के बाद भारतवर्ष में सर्वाधिक लोकप्रिय और सबसे अधिक बोला जाने वाला शब्द है। 'माँ' शब्द जितना ही सरल-सहज और आत्मीय है, राम पर लिखना उतना ही मुश्किल। राम के अस्तित्व को शब्दों में बांधने में बड़े-बड़े महाकाव्य भी अपर्याप्त ही रहे। राम बोलना, राम को महसूस करना आसान इसलिए है कि हमारे जीवन के हर क्षण और हर कण में राम हैं। राम का शाब्दिक अर्थ ही है–"रमन्ते इति रामः" जो रोम-रोम में रमा होता है, समूचे ब्रह्मांड में रमण करता है, उसको जानना-सुनना-कहना मुश्किल क्यों हो भला? पर मेरे लिए राम पर लिखना बहुत कठिन दो कारणों से है। पहली कठिनाई है राम को शब्दों में बाँधने की धृष्टता करना। हजारों वर्षों से जिस राम के विराट स्वरूप पर बहुत बड़े-बड़े ऋषि-मुनियों, मनीषियों–पंडितों ने सब कुछ कह दिया हो उस पर मैं अब क्या कहूँगा। पर ठीक इसी बिंदु पर ईशावास्योपनिषद् का वह सूक्त मेरी मदद करता है-"पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्णमुदच्यते। पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते।" अर्थात् ईश्वर पूर्ण है और पूर्ण में से यदि पूर्ण को निकाल दिया जाता है तो पूर्ण ही बचता है। मेरे लिए राम का स्वरूप कुछ ऐसा ही है, जिसके बारे में सब कुछ कहे जाने के बाद भी अभी बहुत कुछ कहना शेष है। दूसरी मेरी मुश्किल है कि किस राम के बारे में लिखूँ। कबीर दास जी चार राम की चर्चा करते हैं–"एक राम दशरथ का ढोटा, एक राम घट-घट में बैठा, एक राम का सकल पसारा, एक राम है सबसे न्यारा।" स्वयं गोस्वामी तुलसीदास जी जिनके बारे में कहते हैं कि 'हरि अनंत हरि कथा अनंता, कहई सुनई बहु बिधि सब संता'। हमारे लोकमानस में राम की अनगिनत छवियाँ हैं। हमारे ज्ञात सर्वाधिक प्राचीन ग्रंथ 'ऋग्वेद' में राम का जिक्र एक बार आता है। आदिकवि वाल्मीकि ने 'रामायण' में राम की व्यवस्थित कथा लिखी। प्रसिद्ध भारतीय विद्वान ए.के. रामानुजन ने अपने लेख–'Three Hundred Ramayana: Five Examples and Three Thoughts on Translation' में देश-दुनिया की विभिन्न भाषाओं में 300 रामकथा होने की बात कही है। असल में, राम कथा की व्यापकता सारी सीमाओं के पार है। चाहे वह हिन्दू, जैन, बौद्ध आदि धर्मों की सीमा हो या फिर देश, जाति, भाषा चाहे समय की सीमा। भारतीय भाषाओं के साथ ही दक्षिण एशियाई–बर्मी, थाई, इंडोनेशिया, सिंहली, मलेशिया, यूरोपियन भाषाओं के साथ ही भारतीय डायस्पोरा के देशों में रामकथा काफी लोकप्रिय है। साहित्य, चित्रकला, मूर्तिकला, स्थापत्य, दृश्यकला, नाटक, संगीत, फिल्म सहित कोई भी ऐसी विधा नहीं, जो रामकथा से अभिसिंचित न हो। तुलसीदास कहते हैं–"राम सोहि पहचानिए, जो रमता सकल जहान।"

जिस प्रकार एक वृक्ष वातावरण से पोषक तत्व जमीन में गहरी धँसी जड़ों से खनिज तत्वों को लेकर रासायनिक अभिक्रिया द्वारा कहीं अधिक उन्नत, स्वादिष्ट और उपयोगी फल प्रकृति को लौटा देता है वैसे ही राम का चरित्र है, जो अपने देश काल समाज, लोक-परंपरा से अच्छी चीजों को लेकर पूरी मानवता के समक्ष एक ऐसा विराट आदर्श रूप प्रस्तुत करता है, जिसके बारे में राम मनोहर लोहिया लिखते हैं–"सत्य का इससे अधिक आभास क्या मिल सकता है कि 50 या शायद 100 शताब्दियों से भारत की हर पीढ़ी के

दिमाग पर राम की कहानी लिखी हुई है। लोग अगर अपने आचार-विचार के नमूने के रूप में देखेंगे तो राम, कृष्ण और शिव की प्रतिष्ठा को नीचे गिराएँगे, वह पूरे भारत के तंतु और रक्त मांस के हिस्से हैं।" देखा जाए तो राम ने पहली बार भारत की भौगोलिक एकता स्थापित की, उत्तर और दक्षिण को जोड़ा। रामकथा ने भारत और दक्षिण एशिया तथा पूरे डायस्पोरा को एकता के एक सूत्र में बाँध दिया। सही मायनों में राम की प्रतिष्ठा एक 'आकाश धर्मा' देवता या व्यक्तित्व के रूप में है। सगुणोपासना में जितनी राम की प्रतिष्ठा हुई, उससे तनिक भी कम प्रतिष्ठा निर्गुण साधना में नहीं है। नाथ-सिद्धों से लेकर कबीर तक निर्गुण उपासकों के परब्र राम का प्रसार भी भारत समेत पाकिस्तान, बांग्लादेश एवं अफगानिस्तान की सीमा तक है।

जिस प्रकार 'राम' का स्वरूप व्यापक और अनंत है, राम की कथा विविध और विलक्षण है उसी प्रकार राम की भक्ति की पद्धति भी भिन्न एवं विशिष्ट रही है। "जाकी रही भावना जैसी, प्रभु मूरत देखी तिन्ह तैसी।" के साथ ही तुलसीदास ने राम के अमूर्तन रूप का निरूपण कर निर्गुण भक्ति के स्वरूप को भी स्वीकार किया–"बिनु पग चलहि सुनहि बिनु काना, कर बिनु कर्म करहि विधि नाना।" ये कबीर के राम का स्वीकार है, जिसके बारे में कबीर कहते हैं–"दशरथ सुत तिहुँ लोक बखाना, राम नाम का मरम है आना।" दशरथ के पुत्र राम से इतर राम की भक्ति का एक रूप छत्तीसगढ़ की रामनामी पंथ की मान्यताओं में दिखता है। इस पंथ के मानने वालों को रामनामी, रामनमिहा, रमरमिहा कहा जाता है। मुख्य रूप से ये छत्तीसगढ़ की महानदी के दोनों किनारों पर स्थित ग्रामों में निवास करते हैं। महानदी को शास्त्रों में चित्रोत्पला, नीलोत्पला गंगा और महानंदा भी कहा गया है। रामायण एवं महाभारत कालीन ग्रंथों में भी इसका उल्लेख मिलता है। इस नदी के दोनों तटों पर अनेक प्रसिद्ध नगर, गाँव एवं मंदिर अवस्थित हैं। इन नगरों में ऋषि-मुनियों ने प्राचीन काल से ही अपना आश्रम बनाया, जहाँ वे जप-तप किया करते थे। सिहावा, राजिम, सिरपुर, खरौद शिवरीनारायण, दुरदुरिया, चंद्रपुर और संबलपुर आदि नगर महानदी के तट पर बसे हैं। कदाचित इसी कारण ही छत्तीसगढ़ का यह क्षेत्र सांस्कृतिक रूप से काफी समृद्ध रहा है। महानदी के किनारे गिरौदपुरी में बाबा घासीदास ने जन्म लेकर सत्य का मार्ग दिखाया। उनके अनुयायी सतनामी कहलाते हैं। इसी प्रकार महानदी के तट पर स्थित राम नाम को समर्पित रामनामियों का पवित्र तीर्थ है। रामनामियों के लिए शिवरीनारायण का वही महत्व है, जो दूसरों के लिए प्रयाग और काशी का है। माघी पूर्णिमा से लगने वाले मेले के समय इस पंथ के लोग भी शिवरीनारायण में अपना तंबू लगाकर भजन आदि करते हैं।

प्रोफेसर अश्विनी केशरवानी लिखते हैं कि छत्तीसगढ़ के रायपुर, बिलासपुर, जांजगीर चांपा, महासमुंद और रायगढ़ जिले के सारंगढ़, घरघोड़ा, मालखरौदा चंद्रपुर, पामगढ़, कसडोल, बलोदा बाजार और बिलाईगढ़ क्षेत्र के लगभग 500 गाँव में लगभग 500000 रामरमिया निवास करते हैं। कुछ विद्वानों के अनुसार वर्तमान समय में रामनामी गोदना वाले 20000 रामरमिया पंथ के लोग छत्तीसगढ़ में निवासरत होंगे। रामनामी पंथ दरअसल अनुसूचित जाति की एक शाखा है, जो संत कबीरदास और भक्त रैदास को अपने पंथ का मूल पुरुष मानते हैं। राम नाम में सदा रमे रहने वाले यह लोग अहिंसक और शाकाहारी होते हैं तथा

मदिरा से बहुत दूर रहते हैं। अपने वस्त्रों पर राम-राम अंकित होने के साथ ही रामनामी समुदाय के लोग अपने पूरे शरीर पर राम नाम का गोदना गोदवाए रखते हैं। कुछ लोगों में यह गोदना शरीर के पूरे हिस्से पर यहाँ तक कि जिह्वा पर भी राम-राम गुदा रहता है। वहीं कुछ लोगों के लिए यह माथे पर राम-राम शब्द या शरीर के किसी हिस्से पर एक सामान्य गोदना की तरह राम-राम शब्द गुदा रहता है। अपने जीवन में राम नाम को पहनने-ओढ़ने, शरीर पर धारण करने के कारण ही संभवतः इनका नाम रामनामी समुदाय पड़ा।

छत्तीसगढ़ में रामनामी पंथ की उत्पत्ति के संबंध में विभिन्न मत प्रचलित हैं। कुछ विद्वान मानते हैं कि रामनामी पंथ के लोग भी पहले सतनाम के ही उपासक थे। उनमें आपसी सद्भाव और भाईचारा था और उनका बहुत अच्छा संगठन था। ऐसा कहा जाता है कि बाद में उनमें आपस में फूट डालने के लिए नवजात शिशु के माथे पर राम नाम गोदवा दिया गया और प्रचारित कर दिया गया कि यह शिशु राम की इच्छा से इस लोक में आया है। अतः राम की इच्छा के अनुरूप राम नाम का अनुसरण करें। इस प्रकार एक शक्तिशाली संगठन दो हिस्सों–रामनामी और सतनामी में बट गया। कुछ अन्य विद्वान रामनामी समुदाय की शुरुआत परशुराम नामक व्यक्ति से मानते हैं। परशुराम ग्राम 'चारपारा' मालखरौद, छत्तीसगढ़ के निवासी थे। अपने माता-पिता की एकमात्र संतान थे। बाल्यावस्था से ही उन्हें कुष्ठरोग के कारण-अवसाद हो गया था। उन दिनों इस रोग का उपचार किसी रूप में संभव नहीं था और तत्कालीन समाज में इस रोग के प्रति छूत की भावना व्याप्त थी। एक तो वह निम्न वर्ग के व्यक्ति ऊपर से ऐसी व्याधि। उनका भारतीय समाज में जीना मुश्किल हो गया। डॉ. पंचराम सोनी अपने लेख में बताते हैं कि परशुराम अपने जीवन से निराश हो गये थे और एक सुबह अपने परिवार को लेकर जंगल की तरफ चल निकले। वहाँ रास्ते में संयोग से उनकी मुलाकात रामदेव नामक रामानंदी संप्रदाय के एक संत से होती है। उस संत ने परशुराम को अपने घर लौट जाने का सुझाव दिया। परशुराम अपने घर लौट गये, रामचरितमानस को गोद में लिये वह राम-राम जपते रहे, रात ऐसी ही बीती, परंतु दूसरी सुबह चमत्कार हो गया। सुबह होते-होते उनके शरीर पर राम-राम शब्द का अंकन हो चुका था। उनकी व्याधि दूर हो चुकी थी। धीरे-धीरे यह बात हवा की तरह पूरे क्षेत्र में फैली, जनसमुदाय उनके दर्शन के लिए उमड़ पड़ा। चमत्कार से प्रेरित लोगों के अंदर राम-राम के नाम का गोदना गोदाने की परंपरा शुरू हुई, जो बाद में चलकर रामरमिया गोदना की उत्पत्ति और रामनामी संप्रदाय की स्थापना का मूल बनी। रामनामी संप्रदाय पर शोध करने वाले अमेरिकी शोधार्थी प्रोफेसर रामदास लैम्ब ने अपने शोध कार्य 'रैप्ट इन द नेम' में इस उद्भव का गहरा विश्लेषण किया है। डॉ. लैम्ब यह मानते हैं कि परशुराम का जन्मसंबंधी कोई लिखित प्रमाण उपलब्ध नहीं है। प्रारंभिक वर्षों में परशुराम के अनुगामियों की संख्या कम थी, किंतु धीरे-धीरे उसमें वृद्धि हुई। सन् 1920 में परशुराम जी के स्वर्गवास के समय राम-राम गुदवाए हुए रामनामियों की संख्या करीब 20,000 थी इतने ही लोग इनके समर्थक थे।

अपने पूरे शरीर में गुदे हुए राम नाम को दिखाते मेहत्तरलाल कहते हैं–"अब हमारे राम, हमारे शरीर के कण-कण में बसे हुए हैं। अब हमें राम से कौन दूर कर सकता है? मेरे राम तो यही हैं, मेरे मित्र, मेरे

परिजन ने अपने पूरे शरीर पर ही राम नाम अंकित करवा लिया था।" रामकथा का श्रवण, राम-राम का स्मरण, अपने दैनिक जीवन में अभिवादन से लेकर नाम पुकार एवं प्रत्येक संस्कार जैसे शादी-विवाह तक इनके जीवन की धूरी रामनाम ही बन गयी। छत्तीसगढ़ में सरगुजा से लेकर बस्तर तक तुलसीकृत 'श्रीरामचरितमानस' कथा के वाचन, गायन और श्रवण की प्राचीन एवं समृद्ध परंपरा रही है। रामरमिहा लोग रामचरितमानस को भी बहुत महत्व देते हैं। यह उनका मुख्य एवं एकमात्र ग्रंथ है। वस्तुतः इस समुदाय के लोग रामचरितमानस के उन प्रसंगों को, जिसमें वर्ण व्यवस्था का समर्थन किया गया है, या तो हटा देते हैं या उन प्रसंगों की अपने हिसाब से व्याख्या कर अपनाते हैं। राम नाम की महत्ता इनके यहाँ सबसे अधिक है। रामचरितमानस के तुलसीदास की चौपाई को बार-बार उद्धृत करते हैं–

"जद्यपि प्रभु के नाम अनेका।

श्रुति कह अधिक एक तें एका।।

राम सकल नामन्ह ते अधिका।

होउ नाथ अघ खग गन बधिका।।"

लोकजीवन में गोदना की प्रवृत्ति बहुत प्राचीन है। गोदना को लोग चिन्हारी के रूप में बहुत पहले से ही अपने शरीर में गुदवाने में प्रयोग करते थे। रामरमिहा समुदाय के लोगों ने पहली बार गोदना को राम नाम के रूप में गोदाना शुरू किया। इनको अगर ध्यान से देखें तो हमारे आश्चर्य की कोई सीमा नहीं रहती है। राम-राम शब्द, जो दोनों एक में जुड़ा रहता है, उनके शरीर के लगभग हर अंग पर गोदा रहता है। रहन-सहन और बातचीत में राम नाम का अधिकतम उपयोग करने वाले रामनामियों के लिए शरीर पर राम नाम गुदवाना अनिवार्य है। अपने शरीर के किसी भी हिस्से में राम नाम लिखवाने वालों को रामनामी, माथे पर दो राम नाम अंकित करने वाले को शिरोमणी, पूरे माथे पर राम नाम अंकित करने वाले को सर्वांग रामनामी और शरीर के प्रत्येक हिस्से में राम नाम अंकित कराने वालों को नखशिख रामनामी कहा जाता है। गोदना गोदने में प्राय: दो सुई का प्रयोग किया जाता है। काले रंग को अधिक गहरा व पक्का बनाने के लिए उसके ऊपर से मिट्टी के तेल से निकला धुआँ लगा देते हैं। गोदना गोदाते समय कीर्तन और गीत भी गाया जाता है, ताकि भक्ति के रंग में होने वाले दर्द को सहने की ताकत मिले। गोदना के बाद हल्दी का लेप किया जाता है, जिससे गोदना पकने की बात बहुत कम ही देखने-सुनने को मिलती है।

रामनामी समुदाय के लोग प्रायः बहुत ही संगठित रूप से और सहज रूप से एक-दूसरे के साथ मिलजुल कर रहते हैं। सामाजिक व्यवस्था में अगर कभी टकराहट होती भी है तो उन झगड़ों का निपटारा कोर्ट-कचहरी की बजाय वह अपनी पंचायतों में ही करते हैं। इस पंथ की अपनी पंचायत होती है और वह सर्वमान्य संस्था होती है। सतनाम पंथ से यह पंथ इस मामले में भी भिन्न है कि जहाँ घासीदास सतनाम पंथ के गुरु माने गये वहीं रामनामी की नींव रखने वाले परशुराम ने गुरु परंपरा का निषेध किया। उन्होंने स्वयं को भी गुरु कहलवाना पसंद नहीं किया। असल में इस धार्मिक आन्दोलन की जड़ में कहीं न कहीं सामाजिक-धार्मिक विभेद की समस्या है। समाज का स्तरीकरण और किसी भी रूप में भेद-भाव परशुराम

को स्वीकार न था। रामनाम और भगत के बीच किसी भी तीसरे की मध्यस्थता के वे खिलाफ थे। इसीलिए जैत खम्भ या राम-स्तंभ और उस पर रखा रामचरितमानस ही उनका धार्मिक प्रतीक और उस पर खुदा राम नाम तथा अंगों और वस्त्रों पर अंकित रामनाम धार्मिक पहचान बना।

मुख्य रूप से रामनामी पंथ के दो आयोजन देखने को मिलते हैं। एक रामनवमी में संत समागम और दूसरा पौष एकादशी से त्रयोदशी तक चलने वाला तीन दिवसीय मेला, जिसे पंथ मेला भी कहा जाता है। मेले में इस समुदाय के सारे लोगों का जुटान तो होता ही है साथ में महासभा और सामूहिक विवाह भी होते हैं। अगला मेला किस स्थान पर लगेगा, इसका निर्णय भी यहीं पर होता है। रामनवमी मेला महानदी के तटवर्ती ग्रामों में एक बार महानदी के उत्तर में, दूसरी बार महानदी के दक्षिण में लगता है। तीन दिवसीय मेले के पहले दिन मेला स्थल पर निर्मित जयस्तंभ के ऊपर कलश चढ़ाया जाता है। दूसरे दिन रामचरितमानस पाठ, राम नाम के भजन-कीर्तन का आयोजन होता है और मेला के अंतिम दिन सामूहिक विवाह, सामूहिक भोजन भंडारा का आयोजन होता है। मेला स्थल के आस-पास जुआ, मांस, मदिरा और वेश्या गमन जैसी कुप्रथा पर पूर्ण प्रतिबंध होता है। रामलीला भी मेला का प्रमुख आकर्षण होती है। सन् 1960 के पहले तक से पंचों का नामांकन होता था, लेकिन बाद में सामाजिक व्यवस्था में परिवर्तन होने के साथ नामांकन प्रथा की बजाय चुनाव प्रक्रिया अपनायी जाने लगी। सन् 1960 में पहली निर्वाचित पंचायत बनी और उसके बाद से हर वर्ष पंचायत का चुनाव होता है। इस पंचायत में सरपंच होते हैं। 8 गाँव के पीछे एक प्रतिनिधि होता है। यह सब महासभा के प्रतिनिधि कहलाते हैं। पंचायत का कार्य-क्षेत्र सामाजिक-पारिवारिक झगड़ों का निपटारा करना, धार्मिक-सामाजिक और सांस्कृतिक संगठन को मजबूत बनाना और सामूहिक विवाह को संपन्न कराना है। मेला स्थल के बीचों-बीच 13 फीट ऊँचे जय स्तंभ का निर्माण कराया जाता है, जिसके चबूतरे में भी राम नाम अंकित होता है और इस चबूतरे पर रामचरितमानस की प्रति रख दी जाती है, राम नाम का कीर्तन होता है। एक विशेष बात यह भी है कि इस कीर्तन में या रामचरितमानस के पाठ में वाद्य यंत्रों की बजाय घुँघरू मंडित लकड़ी के चौकों से ध्वनि और ताल निकाली जाती है। मयूर पंखों से सजे तंबूरे अपनी सरस स्वरलहरियों से पूरे परिवेश को पावन और भक्तिमय बना देते हैं। रामनामियों की एक बड़ी विशेषता यह भी है कि जो प्रमुख पुजारी या पंच होते हैं वह मोर पंख से सुसज्जित मुकुट को धारण करते हैं। समुदाय के लोगों में दहेज माँगना और तलाक लेना पूर्णतः वर्जित है। हालाँकि विधवा महिला के माथे पर राम नाम देखकर कोई व्यक्ति उससे पुनर्विवाह कर सकता है।

सही मायने में देखा जाए तो रामनामी समुदाय सगुण और निर्गुण राम भक्ति परंपरा के ऐसे संधि पर खड़े हैं, जहाँ ईश्वर में अटूट विश्वास उनकी भक्ति को विरलता प्रदान करती है। एक तरफ तो वे राम के दशरथपुत्र होने का निषेध करते हैं। राम को अवतारी पुरुष ना मानकर परब्र के रूप में प्रतिष्ठित करते हैं। दूसरे सगुण परंपरा की तरह राम के नाम स्मरण पर विशेष बल देते हैं। तुलसीदास कृत 'रामचरितमानस' को अपना प्रमुख पठनीय ग्रंथ मानते हैं। रामभक्ति को यूँ ही नहीं तुलसीदास ने सुरसरि के समान हितकारी बताया है। हमारी संस्कृति में रामनामी संप्रदाय जैसे उदाहरण इस बात की पुष्टि करते हैं कि

गंगा के समान ही रामभक्ति किसी भी प्रकार के अवरोधों को पार करते हुए अपना नया रास्ता बनाते लोकमानस में सतत् प्रवाहित होती रहती है।

संदर्भ

1.अजय अटपटू (सं), छत्तीसगढ़ के लोकजीवन में राम, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 2015

2.आलोक प्रकाश पुतुल, इन रामनामियों को न मंदिर चाहिए न मूर्ति (रिपोर्ट), बी.बी.सी. हिंदी डॉट कॉम (इंटरनेट)

3.राहुल कुमार सिंह मूर्त-अमूर्त kaltara-blogspot.com

4.Ramdas Lambi, The Ramnavmi Samaj and Social Upliftment-Research Gate

अम्बरीश त्रिपाठी,

सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग, शासकीय महाविद्यालय,

मयांडुर दुर्ग, छत्तीसगढ़